ISSN - 2231-1130
वर्ष–सप्तम् ; सितम्बर–2016

जल संकट बनाम निजीकरण : समीक्षात्मक अध्ययन

डा0 अंशु केडिया*

यह मनुष्य की स्वभावगत विशेषता है कि जिस वस्तु का महत्व जितना ज्यादा होता है इस पर उतना ही अधिक नियंत्रण रखने की उसकी चाहत होती है। इस चाहत की पूर्ति में सहयोगी के रूप में भूमिका निभायी है आर्थिक सुधार के लिए प्रेरित 1990 के दशक ने। साथ ही विश्व बैंक, आई एम एफ, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों व अन्य देशी कम्पनियों की बढ़ती दिलचस्पी ने। इस दशक ने बाजार के प्रभाव में जरूरत की हर चीज को, चाहे वह प्राकृतिक ही क्यों न हो, बाजार में बिकने के लिए उतार दिया है। इस प्रकिया में जल, जंगल व जमीन पर निजी स्वामित्व की होड लग चुकी है। जल के निजीकरण की प्रक्रिया विश्वव्यापी हो चुकी है। जल आपूर्ति, प्रबंधन व गुणवत्ता के नाम पर किये गए निजीकरण ने जल को ब्रिकी की वस्तु बना दिया। मिनिरल वाटर के रूप में फलता फूलता व्यवसाय अब अरबों का हो गया है।

शस्यश्यामला भारत की भूमि जहां प्रकृति ने भरपूर खजाना दिया है वहां इस प्राकृतिक धरोहर को सहेज के रखना सरकार से लेकर नागरिकों सबकी जिम्मेदारी हैं। इस गरीब देश में, तहां 77 प्रतिशत जनसंख्या 20 रूपये प्रतिदिन पर गुजारा करती हो वहां निजीकरण की प्रक्रिया निहायत जनविरोधी है।

संविधान के अनुच्छेद 47 के अनुसार यह राज्य की जिम्मेदारी है कि लोगों के पोषण और जीवन स्तर को ऊपर उठाये व जन स्वास्थ्य में सुधार करे। इसके अर्न्तगत जीवन स्तर और जन स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से स्वच्छ पेयजल प्रत्येक नागरिक को उपलब्ध करवाना राज्य की जिम्मेदारी है और यह मूलभूत मानव आवश्यकता है। भारत के संविधान ने अपने नागरिकों को कुछ मूलभूत अधिकार दिये हैं। संविधान का अनुच्छेद 21 'जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा का अधिकार देता है। जल जीवन का रक्षक

* असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज शास्त्र, ए.पी.सेन मेमोरियल गर्ल्स (पी.जी.) कॉलेज, लखनऊ।

होता है। पानी और हवा के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। आज जब पेय जल की उपलब्धता जेब में रुपये से तय होने लगी है तो इस संवैधानिक अधिकार का क्या किया जाये ? सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में पारिस्थितिकी व सार्वजनिक साख सिद्धान्त (Ecology and Public Trust Doctrine) का उल्लेख करते हुए कहा कि पानी, हवा, समुद्र, और जंगल जैसे संसाधन लोगों के लिए अत्यधिक महत्व रखते हैं। इसको निजी स्वामित्व की वस्तु बना देना पूरी तरह से न्याय के विरुद्ध होगा।' (M.C.Mehta vs Kamal Nath (1997) 1 sec 388)A इसी तरह सुभास बनाम बिहार राज्य के निर्णय में न्यायालय ने कहा कि 'स्वच्छ वायु का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत आता है। पर्यावरण के तत्वों मुख्यतया हवा, पानी और मृदा जो जीवन के लिए जरूरी है इनको नुकसान पहुँचाना जीवन के लिए खतरनाक है और यह संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है। यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि पर्यावरण, जल, जंगल, हवा और जमीन को कौन लोग नुकसान पहुँचा रहे हैं?इस पूरी प्रक्रिया में जन सामान्य से लेकर पूंजीपति वर्ग सभी शामिल हैं। परन्तु अन्तर यह है कि जन सामान्य जहां पानी का प्रयोग अपनी दैनिक दिनचर्या के लिये करते है, वहीं पूंजीपति वर्ग इसका प्रयोग मुनाफा के लिये करते है। यह मनुष्य की स्वभावगत विशेषता है कि जिस वस्तु का महत्व जितना ज्यादा होता है इस पर उतना ही अधिक नियंत्रण रखने की उसकी चाहत होती है। इस चाहत की पूर्ति में पूंजीपति वर्ग के सहयोगी के रूप में भूमिका निभायी है आर्थिक सुधार के लिए प्रेरित 1990 के दशक ने। साथ ही विश्व बैंक, आई एम एफ, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों व अन्य देशी कम्पनियों की बढ़ती दिलचस्पी ने। इस दशक ने बाजार के प्रभाव में जरूरत की हर चीज को, चाहे वह प्राकृतिक ही क्यों न हो, बाजार में बिकने के लिए उतार दिया है। इसके लिए मीडिया व शासक वर्ग के सहयोग से इस भ्रमजाल को फैलाने का भी सफल प्रयास किया गया है कि लोग तो नियमित और स्तरीय सुविधाओं के लिए कीमत चुकाने के लिए तैयार है। यही वह भ्रम जाल है जिसने पानी और नदी को भी बाजार की वस्तु बना दिया है नतीजतन्

दुनिया भर में अब पानी का व्यवसाय 500 बिलियन डालर से ज्यादा हो गया है। पानी के क्षेत्र की सुप्रसिद्ध कम्पनी सुएज लियोन्नेज डेज इआक्स के मुख्य कार्यकारी अधिकारी का कथन भी पूंजीपति वर्ग की सोच को दर्शाता है कि पानी एक ऐसा प्रभावी उत्पाद है जो तकरीबन मुफ्त मिल जाता है और जिस के बगैर जिन्दा रहना असम्भव है। मुफ्त मिले इस उत्पाद का मार्केटिंग कर बेचने के काम में तो सिर्फ मुनाफा ही मुनाफा है।

विश्व बैंक ने भारत सरकार के जल संसाधन मंत्रालय व शहरी मामले और रोजगार मंत्रालय के सहयोग में 1999 में 6 खण्डों में विभाजित विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट में बढ़ती आबादी, बढ़ते नगरीकरण और औद्योगीकरण के परिप्रेक्ष्य में घटते जलसंसाधनों की भयावह तस्वीर प्रस्तुत कर प्रबंधन व नियमन के नाम पर निजीकरण की वकालत की गयी थी। 2002 की राष्ट्रीय जलनीति में जल को पहली बार प्रमुख के स्थान पर कीमती शब्द से जोड़कर प्रस्तुत किया गया। यह केवल शब्दों का हेर फेर नहीं था वरन् कीमती शब्द का अर्थ व्यावसायीकरण को मान्यता देना था।

बाद में सरकार और विश्व बैंक के सहयोग से एक निजी प्रकाशक 'एलाईड पब्लिशर्स' ने एक रिपोर्ट प्रकाशित की, यह रिपोर्ट भी जल क्षेत्र व प्रबन्धन, भू जल नियमन एवं प्रबन्धन, सिंचाई क्षेत्र, ग्रामीण जल आपूर्ति और स्वच्छता, पूरी लागत वसूली में विभाजित है। शहरी जल आपूर्ति और स्वच्छता के नाम पर प्रकाशित इस रिपोर्ट में 5 परिवर्तन भी सुझाये गये है जो कि तुलनात्मक प्रतियोगी वातावरण बनाने, वित्तीय व्यवस्था को बाजारोन्मुख बनाने, शुल्क ढांचे को सुधारने, सरकारी वार्डों में सुधार के लिए नीति और नियमन कार्यो का संचालन अलग से करने व नगरपालिका निकायों के हाथ बांधने की वकालत करती है। इसी तरह ग्रामीण जल आपूर्ति और स्वच्छता सम्बन्धित व सिंचाई क्षेत्र पर केन्द्रित रिपोर्ट भी जल उपभोक्ता एसोसिएशन की स्थापना के माध्यम से निजीकरण को बढ़ावा देने की बात करती है।

क्या यह सारी प्रक्रिया यह सिद्ध करने के लिए नहीं है कि हम यह मान चुके है कि यदि बाजार पानी की कीमत तय करेगा तो इसका नियमन व प्रबन्धन सुधर जायेगा। हकीकत यह है कि यह एक जन विरोधी दृष्टिकोण है। यह जनविरोधी इसीलिए भी माना जा सकता है कि इसने पानी जैसी निशुल्क बिकने वाली वस्तु को निजी सम्पत्ति बना दिया है। आज हमारे पास विश्व के विभिन्न देशों के निजीकरण के कटु अनुभव भी हैं। आपूर्ति प्रबन्धन के नाम पर दामों में मनमानी वृद्धि के कारण निजीकरण का जब इन देशों में विरोध हुआ तब इन देशों की सरकारों को या तो पुनः जल प्रबन्धन व नियंत्रण का दायित्व लेना पड़ा या नयी जनकेन्द्रित वैकल्पिक व्यवस्था अपनानी पडी। लैटिन अमेरिका, अफ्रीका, एशिया की गिरती सम्हलती अर्थन्यवस्थाओं की बात यदि हम छोड़ भी दे तो खुद नैगम कम्पनियों के मालिक देश अमेरिका, ब्रिटेन फ्रांस, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड आदि के लोग क्षेत्र, देश की सीमाओं से परे जा निजीकरण के विरोध में सड़कों पर उतरने के लिए मजबूर हुए। फ्रांस के ग्रेनोबिल, अमेरिका के अटलांटा, न्यू आरलींस, बोलिविया के कोचाबंवा, पोर्टो अलेग्रे, ब्यूनस आयर्स, पेनांग, यूक्रेन, इन्डोनेशिया, उरूग्वे, दक्षिण अफ्रीका, स्लोवाकिया आदि वे क्षेत्र व देश है जहां विरोध के चलते पानी व नदी के निजीकरण की व्यवस्था वापस ली गयी।

यह विडम्बना नही ंतो क्या है कि जब विभिन्न देशों के कडुवे अनुभव हमारे पास हैं तब भी हम उनसे सीख न लेकर उस पर चलने को आमादा है। फॉरच्यून पत्रिका की रिपोर्ट के अनुसार बीसवीं शताब्दी के लिए तेल की जो कीमत थी इक्कीसवीं शताब्दी के लिए पानी की वही कीमत होगी। यह अनायास ही नहीं है कि पानी उद्योग का वार्षिक राजस्व आज तेल सेक्टर के लगभग 40 प्रतिशत से ऊपर जा पहुँचा है। भारत की स्थिति तो और भी भयंकर है। भीषणता का अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि देश के कुल 688 जिलों में से अधिकतम 80 जिले ही ऐसे हैं जिनका पानी पीने योग्य रह गया है। 91 जलाशयों का जल स्तर अब तक एक तिहाई घट चुका

है। नदियाँ यहाँ जल की प्राकृतिक स्रोत हैं गंगा, ब्रह्मपुत्र, कृष्णा, गोदावरी, नर्मदा, कावेरी जैसी बड़ी नदियाँ 33 से लेकर 49 फीट तक सिकुड़ चुकी हैं और यह सिकुड़ना जारी रहेगा क्योंकि मुनाफे की हवस पृथ्वी के तापमान को घटने ही नहीं देगी। इसी पूँजीवादी लोभ के चलते नदियों का 75 प्रतिशत से भी ज्यादा पानी प्रदूषित हो चुका है और पीने व नहाने योग्य नहीं रह गया है। नेस्ले, कोकाकोला,पेप्सी आदि द्वारा निर्मित पेय पदार्थ में प्रति व्यक्ति 95 लीटर के हिसाब से पानी इस्तेमाल होता है। ठीक इसी प्रकार बोतलबन्द पानी के धन्धे में 1 लीटर साफ पानी के लिए 5 लीटर पानी इस्तेमाल हो जाता है। बोतलबन्द पानी का व्यापार आज 160 बिलियन डालर हो गया है। धन्धे पर जबरदस्त दबदबा रखनेवाली नेस्ले सहित बिसलेरी, पेप्सी, कोकाकोला जैसी प्रमुख कम्पनियाँ क्या जल संकट को देखते हुए अपना खरबों का मुनाफा छोड़ देंगी?ऐसा वे करने से रहीं, बल्कि वे इन संकटों से और ज्यादा मुनाफा कमाने की कोशिश में रहेंगी। मद्धिम गति से लगातार जारी मन्दी के इस दौर में जब पूँजीपतियों का मुनाफा घटता है तो मुनाफे का यह संकट आम जन के संकटों से मुनाफा पैदा करने की कोशिशों में लग जाता है और आम जनता के लिए और अधिक संकट ले आता है। यह दुष्चक्र चलता रहता है स्थिति तब और खराब होती है जब जल जैसे विषयों पर मंच के विभिन्न सत्रों में विश्व बैंक के मुखिया और खाद्य सामग्री व बोतलबन्द पानी बाजार से सर्वाधिक मुनाफा लेने वाली नेस्ले कम्पनी के अध्यक्ष आदि जैसे लोगों को ही सलाह देने की प्रक्रिया मे शामिल किया जाता हैं।

शोचनीय है कि जहाँ पानी की कमी से अस्पतालों को मरीजों की सर्जरी पर रोक लगा देनी पड़ी हो, वहीं पाँच सितारा होटलों में एक कमरे के प्रतिदिन पानी का खर्च 1,600 लीटर होता है बोरीवली में 210 तरण तालों वाला भवन बनता है। सवाल यह है कि ऐसी विलासिता पर प्रतिबन्ध लगाने की जरूरत क्यों नहीं समझी जाती। यह कैसे सम्भव होता है कि जब देश के 13 से अधिक राज्यों के सूखे की चपेट में होते हैं तब भी वाटर पार्क और जल आधारित मनोरंजन केन्द्र न केवल चल रहे होते हैं बल्कि नये–नये खोले

भी जाते हैं, यह तब जबकि केन्द्र सरकार का यह अधिकार व जिम्मेदारी है कि वह जनहित में पानी की इस बर्बादी पर रोक लगाने के लिए कड़े कदम उठाये।

पानी कभी निजी नहीं हो सकता। यह मुनाफे की वस्तु तो बन ही नहीं सकता। यह अनमोल धरोहर कभी अमीरी गरीबी नहीं देखती अतः सभी का इस पर बराबर अधिकार होना चाहिए। नौकरशाही में व्याप्त असंवेदनहीनता, भ्रष्टाचार जिसके लिये माना जाता है कि इसने निजीकरण की राह आसान की परन्तु अनुभव बनाता है कि निजीकरण ने भ्रष्टाचार को बढ़ाने में मदद ही की है। भारत में, जहां प्रकृति ने नदियों के रूप में भरपूर खजाना दिया है वहां इस प्राकृतिक धरोहर को सहेज के रखना सरकार से लेकर नागरिकों सबकी जिम्मेदारी हैं। इस गरीब देश में, तहां 77 प्रतिशत जनसंख्या 20 रूपये प्रतिदिन पर गुजारा करती हो वहां निजीकरण की प्रक्रिया निहायत जनविरोधी है।

अतः आज आवश्यकता पानी के लिए किसी नए कानून या निजीकरण की नही है वरन् जरूरत है सार्वजनिक व्यवस्था में लगे जंग को दूर करने की। निजीकरण प्रक्रिया में व्याप्त करोड़ों अरबो के ठेके के माध्यम से फलते–फूलते भ्रष्टाचार से समस्या दूर नहीं होगी। यदि हम सार्वजनिक व्यवस्था को पारदर्शी नहीं बना पाते, तो हमे नये विकल्प तलाशने होंगे। विभिन्न देशों में जलसमस्या के समाधान हेतु अपनाये गये जनकेन्द्रित जन भागीदारी वाले सर्वजनिक मॉडल से सबक लिया जा सकता है।

हम आज अमेरिका परस्त होने में खुशी तलाश लेते है लेकिन हम इस पर विचार साझा नहीं करना चाहते कि अमेरिका में जलापूर्ति सम्बन्धित सभी व्यवस्थाएं जन संगठनों द्वारा नियंत्रित की जाती है। यह एक आदर्श स्थिति है जिस पर हम अमल करने के लिए सोच तो सकते ही है।

2015 में ट्रांसनेशनल इंस्टीटयूट (टीएनआई) और कारपोरेट यूरोप आब्जवेटरी (सीईओ) द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'लेके रहेंगे अपना पानी' जन पहलों का नजरिया, संघर्ष और उपलिब्धयां, लगभग 20 देशों में हुए पानी के

निजीकरण के सफल विरोध और वैकल्पिक समाधान का लेखा जोखा प्रस्तुत करती है। इंसाफ और पीस द्वारा जनहित में जारी इस पुस्तक के माध्यम से भारतीय परिस्थितियों को देखते हुए विकल्पों पर बहस की जा सकती है।

संदर्भ –

1 अरूण पाण्डेय, दिलीप चौबे व अन्य विशेष अंक हस्तक्षेप, राष्ट्रीय सहारा 12 मई 2001

2 अतनु राहा, दुनु राय, पानी व सप्लाई, दिल्ली किसकी है, प्रथम संस्करण, नवम्बर 2003, प्रकाशक ट्रांसपोर्ट रिसर्च एण्ड इंजुरी प्रिवेंशन प्रोग्राम, नयी दिल्ली

3 कारपोरेटाइजेशन ऑफ वाटर, www.insafindia.org/ publication /Delhi water htm Page1

4 प्रेम प्रकाश, पानी का निजीकरणः पूँजीवादी लूट की बर्बरतम अभिव्यक्ति, आहवान, दिल्ली, अप्रेल 2011 ahwanmag-com/archives/1187

5 मीनाक्षीः जल संकटः वित्तीय पूँजी की जकड़बन्दी का नतीजा, आहवान, बी–100, मुकुन्द विहार, करावल नगर, दिल्ली, जनवरी, 2016

6 डेविड हाल, भूमिका, ले के रहेंगें अपना पानी, जन पहलों का नजरिया, संघर्ष व उपलब्धियां, ट्रांसनेशनल इंस्टीट्यूट और कॉरपोरेट यूरोप आब्जरवेटेरी द्वारा 2005 में प्रकाशित

7 स्रोत–दिल्ली सांख्यिकी पुस्तिका, भारत सरकार, 2001

8 www.indiawaterportal.org/